Original Research Paper

VOLUME-6 | ISSUE-3 | MARCH - 2017 • ISSN No 2277 - 8179 | IF : 4.176 | IC Value : 78.46

ज्योतिबा फुले के सामाजिक सुधार की प्रासंगिकता

Social Science

KEYWORDS:

डॉ. बिरोदेवी कृष्ण रमोत्रा — उत्तर विद्यावाचस्पति शोध-छात्रा, हिंदी विभाग, आदर्श महाविद्यालय, विटा, जि. सांगली (महाराष्ट्र) ४१५ ३११

डॉ. प्रकाश मोकाशी — प्रधानाचार्य, आदर्श महाविद्यालय, विटा, जि. सांगली (महाराष्ट्र) ४१५ ३११

प्रासंगिकता :

साहित्य की श्रेष्ठ कृतियाँ कालजयी होती है। वे अपने समय का यथार्थ प्रतिबिंबित करती हैं और सर्वकालिक भी होती हैं। अत: वे किसी काल विशेष की सीमा में बांधकर नहीं रखी जा सकती। वे कालजयी होने के कारण मानव को निरंतर दिशा और प्रेरणा देती हैं। 'रामायण', 'महाभारत', 'रामचरित्र मानस'और 'भारत एक खोज' जैसे ग्रंथो में हमें दिव्यता और अलौकिकता के दर्शन होते हैं। इसलिए ये ग्रंथ आज भी उतने ही सार्थक और प्रासंगिक हैं। साहित्य हमें मनुष्य, समाज, संस्कृति, सत्यं-शिवं-सुंदरम् की पहचान कराता है। जो रचना सर्वोत्तम है उसका स्वीकार कर जो अप्रासंगिक है, उसे छोड़ देना चाहिए। जो मनुष्य और मनुष्य समाज के हित में है, विकास और परिष्कार के लिए है संपूर्ण मानवता के लिए कल्याणकारी है, वहीं मनुष्य और उसके समाज के लिए प्रासंगिक है, सार्थक है, वही अर्थपूर्ण है। ज्योतिबा फुले के सामाजिक सुधार की प्रासंगिकता निम्नलिखित है-

१. शिक्षा	२. मूर्तिपूजा व पुरोहितवाद
३. एकेश्वरवाद का समर्थन	४. नारी शिक्षा का समर्थन
५. सत्यधर्म: विश्वधर्म	६. सत्यशोधक समाज
७. मानवतावादी दृष्टिकोण	८. वैज्ञानिक दृष्टिकोण

१) शिक्षा :

ज्योतिबा फुले ने दीन-दलितों के उद्धार के लिए अपना सारा जीवन समर्पित किया। वे जानते थे जब तक लोग जाग्रत नहीं होंगे तब तक न शोषण का विरोध होगा, न भेद-भाव मिटेगा न ही अंधश्रद्धा मिट जाएँगी। इसलिए ज्योतिबा फुले समाज के उपेक्षित लोगों के लिए शिक्षा के द्वार खोलकर उनको ज्ञानच:क्षु प्रदान करते हैं। आधुनिक युग के समाज के लिए यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। बहुजन समाज को जाग्रत कर अपनी आवाज बनाने का श्रेय तो फुले को ही देना पड़ता है। यदि फुले जी नहीं होते तो समाज की जो तस्वीर हम देख रहे हैं, सामाजिक परिवर्तन देख रहे हैं वह संभव होता? यहाँ ही फुले की आवश्यकता और प्रासंगिकता स्पष्ट हो जाती है।

ज्योतिबा फुले के समय में लोक जागृति कम थी, शिक्षा का प्रारंभ भी उन्होंने किया था अर्थात् शिक्षा का प्रमाण अत्यल्प था। अज्ञानता के कारण निम्न समाज भटक गया है। दारिद्रता ने उसको तोड़ दिया है और व्यसनाधीन बना दिया है। ज्योतिबा फुले जानते हैं कि इससे ओर अधिक उनकी दुर्गति ही होनेवाली है। इसलिए वे उन्हे सचेत करना चाहते हैं, भटके हुओं को सही रास्ते पर लाना चाहते हैं। उनके अुसार-

> ''थोडे दिन तीर मद्य वर्ज करा॥ तोच पैसा भरा॥ ग्रंथासाठी ॥१॥
> ग्रंथ वाचीतांना मनीं शोध करा॥ देऊं नका थारा ॥ वैरभावा ॥२॥''[१]

ज्योतिबा फुले शूद्रातिशूद्रो को समझाते हुए कहते हैं कि अरे मद्यपान करना बुरी लत है इसे छोड़ दो। इसमें जो पैसा बरबाद करते हो, उसी पैसे से अच्छा-सा कोई ग्रंथ खरीदा जा सकता है। जिससे तुम स्वयं के विचारों में और तुम्हारे बच्चों के विचारों में परिवर्तन ला सकते हो। क्योंकि ग्रंथ ही गुरू होते हैं। ग्रंथ में ही ज्ञान भंडार छुपा होता है। ग्रंथों से दोस्ती करने से मनुष्य का मन-मस्तिष्क समृद्ध हो जाता है। ग्रंथ ही हमें ऐसा विचार देते हैं कि हम अपने आप पर नियंत्रण पाए, रास्ता न भटके। अत: जो ग्रंथ तुम खरीदोगे उसका अच्छा चिंतन-मनन करो, अपने आप का विश्लेषण करो। विचारों में व्यक्ति को बदलने की शक्ति होती है। यह विचार ही व्यक्ति और समाज बदलने की शक्ति रखते हैं। इसलिए फुले शिक्षा के माध्यम से पिछडे हुये समाज को विचार देकर जाग्रत करना चाहते हैं। इसलिए ही शिक्षा की महत्ता प्रतिपादित करते हैं।

बहुजन समाज शिक्षित तो हो रहा है परन्तु अभी भी यह प्रमाण अत्यल्प है। इस कारण आज भी बहुजन समाज अंधश्रद्धा के चंगुल में फँसा हुआ है। धार्मिक क्षेत्र में आज भी मानसिक गुलाम बनाकर उनका शोषण किया जाता है। इन सारी समस्याओं के समाधान की कुंजी ही फुले के विचार हैं। उन्होंने शिक्षा के द्वार खोलकर लोगों को नई दृष्टि प्रदान की, जिससे वह अपना भला-बुरा पहचान सके। फुले बहुजन समाज के लिए अंग्रेजी शिक्षा की भी मांग करते हैं क्योंकि आधुनिक युग में आगे बढ़ना है, प्रगति करनी है तो वह सब कुछ आना चाहिए जो इस स्पर्धा के युग में जरूरी है। उपरोक्त सभी बातें समाज के लिए आज भी अत्यंत उपयुक्त दिशा दर्शक हैं। अत: फुले के सामाजिक सुधार के विचार आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अत्यंत प्रासंगिक हैं।

२) मूर्तिपूजा व पुरोहितवाद :

फुले जी ने मूर्तिपूजा, पुरोहितवाद और तीर्थयात्रा का निषेध किया। उनके अनुसार ईश्वर की भक्ति के लिए पांडे, पुरोहित की आवश्यकता नहीं। प्रत्येक मनुष्य अपनी धार्मिक विधियाँ स्वयं कर सकता है। फुले आजीवन मानव मुक्ति की लड़ाई लड़ते रहे। इस मुक्ति में उन्होंने धार्मिक गुलामी से समाज की मुक्ति को अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना। फुले जी धर्म के ठेकेदारों को आवाहन करते हैं कि आम जनता का शोषण बंद करे, धर्म के नाम पर जो अधर्म फैला रहा है उसको रोके और सभी के साथ समान न्याय करें। इस संबंध में फुले लिखते है-

> ''आत्मज्ञान नाहीं आर्य ब्राह्मणाला ॥ छळी मानवाला ॥ सर्वोपरी ॥१॥
> क्षमा दया नाहीं अहंब्रम्ह झाला ॥ भिक्षुक बनला ॥ जगा त्रास ॥२॥
> अींशूद्र याने कनिष्ट मानीला ॥ गर्वाने फुगला ॥ कोल्ह्यापरी ॥३॥
> श्राद्धाचे निमित्त मुक्य गाया वधी ॥ स्वत:करी विधी ॥ जोती म्हणे ॥४॥''[२]

फुले का मानना है कि ब्राह्मण (पुरोहित) के पास आत्मज्ञान तो नहीं है परन्तु अहं अवश्य है। छल कपट से लोगों को लूटना ही इनका धर्म बन गया है। उनके दिल में न किसी के प्रति दया है न क्षमा। अपने आपको सर्वोच्च मानकर शूद्रों को हीन मानकर गर्व में वह चूर हो गया है। श्राद्ध के निमित्त मुक गाय के कत्ल का पाप करना और अपने आपको पुण्यवान मानना यह कहाँ की नीति है। आज भी गाय के कत्ल की बात अक्सर समाचार में सुनने में आती है, किंतु श्राद्ध के नाम पर हो रहा शोषण जारी है। इन सारी बातों को लोग समझने भी लगे हैं, वे बदलना भी चाहते हैं लेकिन लोकलाज के भय से डरते हैं और न चाहते हुए भी वह सब कुछ करते हैं जो ब्राह्मण चाहता है करवाता है। इसलिए फुले को कहना पड़ा कि प्रत्येक मनुष्य अपनी धार्मिक विधियाँ खुद कर सकता है। भागवान तक पहुँचने के लिए किसी विचोलिएँ की आवश्यकता नहीं। यथार्थता फुले के विचार समाज के लिए आज भी प्रासंगिक हैं।

३. एकेश्वरवाद का समर्थन :

फुले नास्तिक नही थे, वे ईश्वर के अस्तित्व को मानते थे। उनके अनुसार सारी सृष्टि का निर्माता एक ही है तो हमें अलग-अलग रूपों में उसकी पूजा करने की क्या आवश्यकता है? सृष्टि के कण-कण में भगवान हैं। वे अनादि और अनंत है तो उसे खोजने की आवश्यकता नहीं। उसका कोई रंग रूप नहीं है। वे तैंतीस करोड़ देवों की कल्पना को नहीं मानते। वे एकेश्वरवादी थे। सृष्टि की पूजा ही ईश्वर की पूजा है। इस सम्बन्ध में उनके यह स्पष्ट विचार -

> ''निर्मीकानें जर एक पृथ्वी केली ॥ वाही भार भली ॥ सर्वत्रांचा ॥१॥
> तृणवृक्षभार पाळी आम्हासाठीं ॥ फळें तो गोमटीं ॥ छायेसह ॥२॥
> सुखसोईसाठी गरगर फेरे ॥ रात्रंदिन सारें ॥ तीच करी ॥३॥
> मानवांचे धर्म नसावे अनेक ॥ निर्मीक तो एक ॥ जोती म्हणे ॥४॥''[३]

अर्थात निर्माणकर्ता ने एक ऐसी पृथ्वी निर्माण की है जो हम सभी का भार वहन करती है। विभिन्न वृक्षों का भरण-पोषण कर वह हमारे लिए छाया एवं फल उत्पन्न करती है। हमारी सुविधाओं के लिए ही वहस्वयं अस्थिर रहती है, दिन-रात वह हमारे लिए कार्यरत रहती है, वही उसका धर्म है। यदि निर्मिक एक है, पृथ्वी एक है, यहाँ से वहाँ तक मानव एक है तो धर्म अनेक किसलिए हैं? यह फुले का तथाकथित धार्मिक व्यवस्था को सवाल है। फुले जी के अनुसार ईश्वर ने ही यह सृष्टि रची है। इसलिए वह किस बात की अपेक्षा कर सकता है। वह सब कुछ उसी के द्वारा निर्मित है, उसका अपना है वह जब चाहे तब उसका उपभोग ले सकता है। यह तो स्वार्थी और भोंदू लोगों ने अपने स्वार्थ के लिए शुरू किया हुआ है ताकि उनकी दुकाने चलती रहें। फुले जी के विचार मनुष्य को सही मार्ग दिखाते हैं। इसलिए उनके विचार आज भी प्रासंगिक है।

४) नारी शिक्षा का समर्थन :

''ज्योतिबा फुले ने सन १८४८ में पहली कन्याशाला खोली और सन १८५१ में अछुतों के लिए पहली पाठशाला खोली।''[४] यह किसी भारतीय द्वारा प्रथम कन्या विद्यालय था। उनका कहना था यदि लड़की शिक्षित होती है तो उसके साथ दो घर शिक्षित होते हैं एक मायका और दूसरा ससुराल। उन्होंने नारी की स्वतंत्रता और उसके अधिकारों की प्रतिष्ठा का समर्थन किया। आज हर क्षेत्र में नारी अग्रणी स्थान पर है। आज वकील से लेकर जिलाधीश, अध्यापक, सचिव, सरपंच और प्रधानमंत्री तक के सभी पदों पर और विभिन्न क्षेत्रों में नारी अपनी सामर्थ्य पर कई दायित्वों को सफलता से निभा रही है। पुरुषप्रधान समाज व्यवस्था में कई शताब्दियों से अज्ञान के अंधकार से घिरी हुई नारियों को सर्वप्रथम ज्योतिबा फुले ने मुक्त किया। महिलाओं के जीवन में तो शिक्षा से इतना परिवर्तन आया है कि हरेक क्षेत्र में उसने पुरुषों के बराबरी का स्थान हासिल किया है। जमीन पर तो उसने अपनी मेहनत और लगन से असाध्य भी साध्य कर दिखाया किन्तु वह अब आकाश में भी उडान भरने लगी हैं। भारत की तस्वीर अब बदल रही है। परन्तु यह भी सच है कि जहाँ शहरों में गति के साथ परिवर्तन हो रहा है। वहाँ ग्रामीण परिवेश में आज भी लोग शिक्षा से बहुत दूर हैं। फुले अपनी दूरदृष्टि से अपने समय में जान गए थे कि अंग्रेजी भाषा का ज्ञान भी अवश्यक है क्योंकि वह विश्वभाषा बनने वाली है। फुले जी ने स्कूल खोलकर नारियों के लिए जो ज्योति प्रज्वलित की, वह आज भी उतनी ही प्रासंगिक है।

५. सत्यधर्म : विश्वधर्म :

ज्योतिबा फुले के अनुसार सत्यधर्म ही सभी मानवों का एकमात्र धर्म है। जो इस समाज अथवा धर्म में सम्मिलित होना चाहते हैं उसके लिए पहली शर्त है सत्य का आचरण। एक ही निर्माणकर्ता द्वारा निर्माण किए हुए समस्त मानवों के लिए 'सार्वजनिक सत्यधर्म' के सिवाय अन्य कोई रास्ता नहीं है। फुले आजीवन 'सत्य' की ही वकालत करते रहे। सत्य के तेज के वल पर ही वे अंत तक व्यवस्था से लड़ते रहे। वे हर बात को 'सत्य' की कसोटी पर परखकर देखते थे। उनकी हर बात के पीछे कोई न कोई तर्क अवश्य होता था। फुले इस सत्य को पहचान चुके थे कि एक समाज दूसरे समाज के साथ अन्याय, अत्याचार करता है। फुले जैसे सत्यवादी यह सब कुछ कैसे सहन करता।

सत्यधर्म वुद्धि और विवेक को ही ज्ञान के साधन मानता है। न्याय, समानता, स्वतंत्रता तथा बंधुता के तत्त्वों का सभी के लिए प्रत्यक्ष रूप से कार्यान्वयन करनेवाला समाज निर्माण करने की लगन ज्योतिबा फुले के सत्यधर्म की जड़ में है। सत्य धर्म में नई विधियाँ देते समय यह सावधानी बरती गयी कि सार्वजनिक सत्य, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और जनहितवादी दृष्टि पर कोई आँच न आएँ। इससे स्पष्ट होता है कि फुले जी ने कदम - कदम पर सत्य का ध्यान रखा। इसी कारण सत्य को आधार मानने वाला 'सत्यधर्म विश्वधर्म' कहा जाता है। फुले जी के अनुसार 'सत्य-वर्तन' बहुत आवश्यक है। इसी से व्यक्ति की पहचान बनती है। सत्य ही हमारे आँखे खोलता है, उसके कारण ही हमारा विवेक जाग्रत होता है। सत्य के आधार पर ही हम किसी बात को वुद्धि की कसोटी पर परखकर देख सकते है। उसके कारण ही कोई तर्क दे सकते हैं, तर्क के आधार पर ही हम किसी निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं। इसलिए सत्य का असाधारण महत्त्व है। ज्योतिबा फुले ने सत्यधर्म की बात जो १८८० में कही थी वे आज भी उतनी ही प्रासंगिक है।

६) सत्यशोधक समाज :

'सार्वजनिक सत्यधर्म' यह ज्योतिबा का अंतिम ग्रंथ है। ज्योतिबा फुले के शरीर का दायाँ भाग पक्षाघात से बेकार होने के कारण यह ग्रंथ उन्होंने बाएँ हाथ से लिखा। फुले जी ने सत्यशोधक समाज स्थापित कर सामाजिक आंदोलन का प्रयास किया। इस आंदोलन के मूल में उनका रचनात्मक विचार था कि समाज की बहुसंख्यक जनता का सामाजिक शोषण बंद हो, सभी मानवों को मुक्त करना। यह मानव- अधिकारों का विचार था। इस

ग्रंथ की रचना प्रश्नोत्तर के रुप में की गयी है। जैसे, प्रश्न है– इस विश्व में मनुष्य प्राणी कैसे सुखी रह सकता है? फुले जी का उत्तर था – ''सत्य आचरण किये बिना मनुष्य इस विश्व में सुखी नहीं हो सकता। इस संबंध में फुले लिखते हैं–

सत्य सभी का आदि –घर, सभी धर्मों का आश्रय घर।''[५]

अर्थात् सत्य सभी लोगों का घर है, इस घर में सभी मनुष्यों का स्वागत है क्योंकि यह सभी धर्मियों के लिए आश्रय घर है जहाँ कोई भेदभाव नहीं किया जाता। सत्य के रास्ते पर चलने वाला कोई साधारण आदमी इस धर्म का अनुयायी बन सकता है। सार्वजनिक सत्यधर्म के द्वार सबके लिए खुले हैं। 'सार्वजनिक सत्यधर्म' में तैंतीस सूत्र समाविष्ट हैं। इससे स्पष्ट होता है कि अन्य धर्मों के प्रति आदरभाव और सहिष्णुता सार्वजनिक सत्यधर्म की विशेषता है।

ज्योतिबा फुले ने सत्यशोधक समाज के रूप में समानता आंदोलन की नींवडाली थी। वह आंदोलन सन् १९३५ तक चलता रहा। आज उस आंदोलन का कोई अस्तित्व नहीं है। फुले जी के निधन के बाद यह आंदोलन विकसित नहीं हो सका क्योंकि वीसवीं शताब्दी के आरंभ में समग्र क्रांति के बदले देश की स्वतंत्र्यता को ही अधिक महत्त्व दिया गया। बीसवीं शताब्दी के आरंभ में श्री केशवराव जेधे जवलपुर, कोल्हापुर के नरेश शाहु महाराज, भास्करराव जाधव आदि ने फिर एक वार सत्यशोधक समाज के आंदोलन को प्रभावकारी बनाने का प्रयास किया, लेकिन तब उसने ब्राह्मण विरोधी रुप धारण कर लिया। ब्राह्मणों के अलावा अन्य ऊँची जातियों के लोगो द्वारा दलितों तथा पिछड़ी हुई जातियों पर किए जानेवाले जुल्मों को नजरअंदाज किया जाने लगा। इससे सत्यशोधक समाज के आंदोलन का बल कम होता गया। सामाजिक परिवर्तन के शस्त्र के रूप में ज्योतिबा फुले द्वारा स्थापित यह आंदोलन अभी तक अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँचा है। जब तक सामाजिक विषमता नष्ट नहीं हो जाती, तब तक यह समझना बड़ी भारी भूल होंगी कि हमें संपूर्ण स्वतंत्रता मिल गई है। गाँव में आज भी ऊँची जाति वाले दलितों पर अत्याचार करते हैं। समाज के लिए फुले आज भी प्रेरणा पुरुष है, उनके सामाजिक सुधार के विचार आज भी प्रासंगिक हैं।

७. मानवतावादी दृष्टिकोण :

फुले जी का दृष्टिकोण मानवतावादी रहा। फुले जी के अनुसार मनुष्य जाति और धर्म के बल पर नहीं बल्कि अपने कर्म के बल पर अपनी पहचान बनाता है। हर मनुष्य को जीवन जीने का अधिकार है। हर मनुष्य समाज का अनन्य साधारण हिस्सा है फिर एक ऊँच और एक निम्न कैसे? फुले जी ने मानवमुक्ति की लड़ाई के लिए अपना सारा जीवन समर्पित किया। फुले जी वर्ण व्यवस्था को नकारते हैं और नई समाज व्यवस्था निर्माण करने का संकल्प करते हैं। जिस ब्राह्मणी व्यवस्था ने आम आदमी का विभिन्न षड़यंत्रों के माध्यम से शोषण किया है, उनको सुधारने का मौका दिया जाना चाहिए। ऐसी उनकी धारणा थी। इसे ही मानवता कहते हैं जो मनुष्य को मनुष्यता सीखलाता है और भटके हुए मुसाफिर को मनुष्यता के रास्ते पर ले आता है। फुले जी के अनुसार ब्राह्मण निम्न जातियों के लोगों से घृणा करते हैं यदि प्रत्युत्तर में हम भी ऐसा ही करते हैं तो उनमें और हममें क्या फर्क रहा जाएगा। मनुष्य को प्रेम के बलवूते पर जीता जाता है, घृणा के बल पर नहीं। फुले जी अपनी विशाल दृष्टि का परिचय इन पंक्तियों में देते हैं–

''ख्रिस्त महमद मांग ब्राह्मणासी ॥
धरावे पोटाशीं ॥ बंधूपरी ॥''[६]

हमें न केवल हिंदू धर्मीय बल्कि ख्रिस्त, मुहम्मद, मातंग, बाह्मणों इन सभी के साथ भी हमारा आचरण बंधु जैसा ही होना चाहिए। हिंदू धर्म के लोग ऊँच–नीच का भेद मानते हैं, एक दूसरे को घृणा से देखते हैं, वहाँ फुले को जिस ब्राह्मणी व्यवस्था का निम्न वर्णीयों को शिकार होना पड़ा, उन ब्राह्मणों को भी हम गले से लगाएँ और अपने भाई चारे का परिचय दें।

आज भी जाति, धर्म, वर्ण, राज्य, राष्ट्र के लिए झगड़े हो रहे हैं। मानवीय मूल्यों और मानवता का क्षीण होने की आज की स्थिति में फुले जी के इन सुलझे हुए विचारों का मूल्य बहुत बड़ा है। आज के आधुनिक विज्ञान – युग में फुले के सामाजिक सुधार के विचारों की अधिक प्रासंगिकता हैं।

८. वैज्ञानिक दृष्टिकोण :

ज्योतिबा फुले तत्कालिन समाज को धर्म युग से निकाल कर तर्क युग में ले आये, धार्मिक अंधविश्वास के पारंपारिक मध्ययुग से बुद्धिवाद के आधुनिक युग में ले आये। उस समय महाराष्ट्र मंत्र–युग में जी रहा था। तब ज्योतिबा फुले ने अज्ञान और अंधकार की अति प्राचिन घाटी में शूद्रों, अतिशूद्रों तथा नारी वर्ग को ज्ञानरूप प्रकाश की पहली किरण दिखाई। फुले जी ने अज्ञान के अंधकार को मिटाकर जन्मगत विषमता का जाल तोड़ दिया। विश्व का ज्ञानभंडार सबके लिए खोल दिया। उन्होंने अपना सारा जीवन सामाजिक समता स्थापित करने के लिए किया। मानवीय मूल्यों की स्थापना के लिए ही वे निरंतर प्रयत्नरत रहे।

ज्योतिबा फुले वैज्ञानिक विचारधारा के थे। उनके अनुसार मनुष्य अपनी जाति से नहीं, कर्मो से श्रेष्ठ बनता है। वह दैव एवं भाग्य की कल्पना को भी अर्थहीन मानते हैं। उनका कहना है कि मनुष्य को अपनी अच्छी–बुरी करनी का फल यही मिलता है। फुले जी के वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उदाहरण–फुले जी को सावित्रीबाई से कोई संतान नहीं थी। उनके पिता ने उनके सामने दूसरे विवाह का प्रस्ताव रखा, परन्तु फुले ने यह प्रस्ताव ठुकराते हुए अपनी तर्कबुद्धि का परिचय देते हुए कहा कि पहली पत्नी को अगर संतान नहीं होती तो उसमें उसका क्या दोष है। दोष केवल स्त्री में नहीं पुरुष में भी हो सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि ज्योतिबा फुले एक वैज्ञानिक थे, हर बात की चिकित्सा करते थे और तार्किक बुद्धि से निर्णय लेते थे। वे विचारों को कृति में उतारने वाले सच्चे महात्मा थे। पिता की मृत्यु पर उन्होंने ब्राह्मणों के स्थान पर अनाथ और अपंग लोगों को भोज दिया, गरीब विद्यार्थींयों को पुस्तके बाँटी। ये बातें उनके विज्ञाननिष्ठ होने का परिचय देती है। फुले समाज को एक नई दृष्टि देना चाहते थे, किन्तु उसके साथ–साथ समाज में फैले अंधश्रद्धा के रोग को समूल नष्ट कर देना चाहते थे–

''जप अनुष्ठाने स्त्रिया मुळें होती। दुजा का करीती। मुलासाठी? ॥१॥
भट ब्राह्मणात बहु स्त्रिया वांझ। अनुष्ठानी बीज। नही का रे?'' ॥२॥ [७]

फुले जी का कहना है कि यदि जप अनुष्ठान से नारियों को बच्चे हो सकते थे तो फिर दूसरे पति की आवश्यकता ही नहीं होती थी। पत्नी के लिए पति की आवश्यकता नहीं होती थी। भट–ब्राह्मणों में भी अनेक स्त्रियों पर बाँझ होने की नौबत क्यों आती?। यदि अनुष्ठान द्वारा बीज उत्पन्न किया जा सकता तो कोई स्त्री बाँझ नहीं होती। ज्योतिबा फुले इतने विज्ञानवादी थे कि स्वच्छता को अनन्य साधारण महत्त्व देते थे। व्यक्ति को तन से भी और मन से भी स्वच्छ रहना चाहिए, यहीं उनकी धारणा थी। उनके मतानुसार यदि हम लोगों में रहना चाहते हैं तो हमारा आचरण ही ऐसा क्यों कर हो, जिससे कि लोग हमारी निंदा करे। मनुष्य अपना जीवन सुखी बनाना चाहता है, दीर्घायु होना चाहता है, निरोगी बनकर जीना चाहता है तो स्वच्छता ही पहली शर्त है। इस संबंध में वे लिखते हैं–

''स्वच्छ होण्यासाठी स्नान तें करावें ॥ वस्त्रांनी पुसावें ॥ लागलेंच ॥१॥
स्नानाच कंटाळा पुळयांचे माहेर ॥ खरजुचें घर ॥ आदीपीठ ॥२॥
दांत खाऊनीयं बोलता चालता ॥ नित्य खाजवीतां ॥ वेल जाई ॥३॥
स्वकीय स्वच्छता मुळीं विसरला ॥ वैद्यानें नाडीला ॥ जोती म्हणे ॥४॥''[८]

फुले जी कहते हैं कि यदि तुम निरोगी जीवन बिताना चाहते हो तो स्वच्छता बहुत आवश्यक है। रोज उठकर स्नान करना चाहिए, वस्त्रों से अंग साफ करना चाहिए। जो नित्य स्नान नहीं करता उसका शरीर विभिन्न रोगों का आदि पीठ बन जाता है अर्थात् उसे विभिन्न रोगों का शिकार होना पड़ता है। खाज–खुजली से हम इतने परेशान हो जाते हैं कि अन्य बातों में हमारा मन ही नहीं लगता। लोग भी हमारी स्थिति को देखकर हमारी ओर घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं। लोगों से हमें मुँह छुपाना पड़ता है। इसलिए हर मनुष्य को स्वच्छता से नाता जोड़ना चाहिए। जब हम स्वच्छता को भूल जाते हैं तो हम स्वयं रोग के शिकार होते हैं। फिर हमें किसी वैद्य की शरण में जाना पड़ता है और वह हमें लूटने लगता हैं। इसलिए ही हमे स्वच्छता का मूलमंत्र सीखना चाहिए। जिसका तन सशक्त उसका मन भी सशक्त होता है। ज्योतिबा फुले कहते हैं कि, जो स्वच्छता को ही भूल जाता है, वह जीवन में कभी सुखी नहीं हो सकता। इससे स्पष्ट होता है कि फुले वैज्ञानिक विचारधारा के थे। उन्होंने अकसर समाज के हित को ध्यान में रखकर ही अपनी बात कही। उनके पास एक दिव्य दृष्टि थी, एक विशाल वैज्ञानिक दृष्टिकोण था जिसके माध्यम से उन्होंने जनजागृति का अभियान चलाया। इसलिए आज के वैज्ञानिक युग में भी फुले हमें अधिक प्रासंगिक लगते हैं।

सारांश :

ज्योतिबा फुले के अनुसार शिक्षा द्वारा 'ज्ञान' का प्रकाश समाज के सभी लोगों के लिए आवश्यक है। उन्होंने शिक्षा के द्वार खोलकर लोगों को नई दृष्टि प्रदान की। फुले बहुजन समाज के लिए अँग्रेजी शिक्षण की माँग करते हैं, क्योंकि आधुनिक युग में प्रगति करनी है तो वह सब कुछ आना चाहिए जो इस स्पर्धा के युग में जरूरी है। फुले जी के शिक्षा संबंधी विचार आज भी अत्यंत उपयुक्त हैं, दिशा दर्शक हैं, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अत्यंत प्रासंगिक हैं। फुले निर्गुणवादी थे। वे नास्तिक नहीं थे। वे ईश्वर के अस्तित्व को मानते थे, परन्तु मूर्तिपूजा और पुरोहितवाद का खण्डन करते थे। अपने स्वार्थ के लिए ब्राह्मणों ने समाज में कर्मकांड फैलाए थे, जप, तप, होम, हवन, व्रत–उपवास, यज्ञ–अनुष्ठानों की भरमार थी। फुले जी की वैचारिक भूमिका विज्ञान पर आधारित थी। अत: उन्होंने मूर्तिपूजा व पुरोहितवाद का खण्डन किया। यथार्थता फुले जी के विचार समाज के लिए आज भी प्रासंगिक हैं। फुले जी ने एकेश्वरवाद का समर्थन किया। उनके अनुसार सारी सृष्टि का निर्माता एक है। उन्होंने नारी शिक्षा का समर्थन किया। उनके लिए स्कूल खोले और विद्यालयों में उन्होंने स्वयं और उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले ने पढ़ाना शुरू किया। फुले जी ने स्कूल खोलकर नारियों के लिए ज्योति प्रज्वलित की, वह आज भी उतनी ही प्रासंगिक है। फुले जी ने सत्यधर्म को ही विश्वधर्म कहा है। वह अजीवन 'सत्य' की ही वकालत करते रहे। उनके अनुसार जो मनुष्य सत्य की राह पर चलता है वह कभी धोखा नहीं खाता। अत: सत्य का असाधारण महत्त्व है। सार्वजनिक सत्यधर्म में फुले जी ने तैंतीस सूत्र समाविष्ट किए हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि अन्य धर्मों के प्रति आदरभाव और सहिष्णुता सार्वजनिक सत्यधर्म की विशेषता है। फुले जी धर्म के बारे में व्यक्ति स्वतंत्रता देना चाहते हैं। 'सत्यशोधक समाज' की सदस्यता सभी जातियों, धर्मों के लिए खुली थी। फुले जी के निधन के बाद यह आंदोलन विकसित नहीं हो सका। जब तक सामाजिक विषमता नष्ट नहीं हो जाती, तब तक हम पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं होते। समाज के लिए फुले आज भी प्रेरणा – पुरुष हैं, उनके विचार आज भी प्रासंगिक हैं। फले जी मानवतावादी थे। फुले जी वर्ण–व्यवस्था को ठुकराते हैं और नई समाज व्यवस्था निर्माण करने का संकल्प लेते हैं। फुले जी की ऐसी धारणा थी कि जिस ब्राह्मणी व्यवस्था ने आम–आदमी का विभिन्न षड़यंत्रो के माध्यम से शोषण किया है, उनको सुधारने का मौका दिया जाना चाहिए। इसे ही मानवता कहते हैं। जो मनुष्य को मनुष्यता सीखलाता है। उनके अनुसार हमारा सभी धर्मों के साथ आचरण बंधू जैसा होना चाहिए। आज भी जाति, धर्म, वर्ण, राज्य, राष्ट्र के लिए झगड़े हो रहे हैं। मानवीय मूल्य क्षीण हो रहा है। आज के आधुनिक विज्ञान युग में फुले के विचारों की अधिक प्रासंगिकता है। फुले जी वैज्ञानिक विचारधारा के थे। फुले ने अज्ञान के अंधकार को मिटाकर विश्व का ज्ञानभंडार सबके लिए खोल दिया। वह दैव एवं भाग्य की कल्पना को भी अर्थहीन मानते हैं। फुले समाज में फैले अंधश्रद्धा के रोग को समूल नष्ट करना चाहते थे। उनके अनुसार यदि मनुष्य दीर्घायु तक जीना चाहता है तो स्वच्छता बहुत आवश्यक है। अत: हमें नित्य स्नान कर, धुले हुए वस्त्र धारण करने चाहिए। फुले जी ने अपने वैज्ञानिक विचारों के आधार पर ही समाज परिवर्तन का अभियान चलाया, मानव मुक्ति का संकल्प किया और अपने महान सामाजिक सुधार के विचारों का परिचय दिया जो आज के युग में अधिक प्रासंगिक हैं।

संदर्भ :

१. संपादक य. दि. फडके, महात्मा फुले समग्र वाङ्मय, पृष्ठ ५५०, महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृती मंडल मुंबई, सुधारित पाचवी आवृत्ती २८ नोव्हेंबर १९९१.
२. वही, पृष्ठ ५४०
३. वही, पृष्ठ ५३५
४. मुरलीधर जगताप, युगपुरुष महात्मा फुले, पृष्ठ १, महात्मा फुले चरित्र साधने प्रकाशन समिती, महाराष्ट्र शासन, द्वारा–शिक्षा विभाग, मंत्रालय, मुंबई ४०००३२, प्रथम संस्करण – ११ मई १९९३
५. वही, पृष्ठ १३०
६. संपादक य. दि. फडके, महात्मा फुले समग्र वाङ्मय पृष्ठ ५३७, महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृति मंडल, नवीन प्रशासन भवन, मंत्रालयासमोर, मुंबई ४०००३२, सुधारित पाचवी आवृत्ती, २८ नोव्हेंबर १९९१
७. वही, पृष्ठ ५३५
८. वही, पृष्ठ ५५४